अध्याय - 2

मध्यप्रदेश की लोककलाएँ

प्रदेश की लोककलाएँ हमारा गौरव हैं। ये कलाएँ सदियों से आज तक मौखिक चली आ रही हैं। लोककलाएँ जीवन में उमंग, उल्लास और आनन्द भरती हैं। प्रदेश के निमाड़, मालवा, बुन्देलखण्ड और बघेलखण्ड अंचल लोककलाओं से भरपूर हैं, जहाँ लोकगायन, नृत्य, नाट्य, संगीत, चित्रकला आदि की रंगीन छटाएँ हैं। ये विधाएँ परंपरागत हैं और किसी-न-किसी पर्व-त्योहार, अनुष्ठान और संस्कारों से जुड़ी होती हैं।

(क) निमाड़ अंचल

1. **लोकगीत :** निमाड़ के लोकजीवन का कोई भी अवसर ऐसा नहीं होता, जब कोई-न-कोई गीत न गाया जाता हो। जन्म, विवाह और मृत्यु आदि सोलह-संस्कार के अवसरों पर अलग-अलग लोकधुनें और लोकगीत गाए जाते हैं। संस्कार गीत प्रायः घर की महिलाएँ ही गाती हैं। पर्व-त्योहार, अनुष्ठान इत्यादि गीतों की प्रकृति स्त्री-पुरुष परक अर्थात् दोनों ही तरह की होती है। लोकगीतों की गायन-शैली प्रायः अलग-अलग होती हैं। निमाड़ी लोकगायन का माधुर्य विवाह, एवं गणगौर गीत, संत सिंगाजी के भजन, कलगी-तुर्रा गायन परंपरा आदि परम्परागत विधाओं में मिलता है।

2. **कलगी-तुर्रा :** कलगी-तुर्रा प्रतिस्पर्द्धात्मक लोक-गायन शैली है। इस गायन-शैली का प्रसार एक समय कर्नाटक से लगाकर उत्तरप्रदेश तक था। निमाड़, मालवा, बुन्देलखण्ड और बघेलखण्ड में कलगी-तुर्रा गायन-मंडलियाँ अभी भी मौजूद हैं।

   चंग की थाप पर कलगी-तुर्रा गाया जाता है। इसके दो अखाड़े होते हैं—एक कलगी अखाड़ा, दूसरा तुर्रा अखाड़ा। अखाड़े के गुरु को उस्ताद् कहते हैं। आशु-कविता के साथ महाभारत की कथाओं, पौराणिक आख्यानों से लेकर वर्तमान प्रसंगों को सवाल-जवाब के माध्यम से पारम्परिक गायिकी में पिरोया जाता है। कलगी दल 'शक्ति' और तुर्रा दल 'शिव' को बड़ा बताने की कोशिश करता है।

3. **संत सिंगाजी भजन :** संत सिंगाजी 15वीं सदी के निर्गुण संत-कवियों में सबसे अग्रणी हैं। अपनी आध्यात्मिक साधना और शुचिता के कारण संत सिंगाजी के पद समूचे निमाड़ और मालवा के हिस्से में इतने लोकप्रिय हुए कि सिंगाजी के पद-गायन की एक अलग शैली बन गई। संत सिंगाजी ने निमाड़ी में कई सौ आध्यात्मिक पदों की रचना की।

4. **निरगुणिया गायन-शैली :** निमाड़ी लोक में निरगुणी और सगुणी संत-कवियों की छाप लगाकर पदों की रचना और गाने की सुदीर्घ और समृद्ध परंपरा रही है। इसमें कबीर, मीरा, रैदास, ब्रह्मानन्द, दादू, सूर, तुलसी आदि कवियों की छाप वाले भजन लोक में सबसे अधिक प्रचलित हैं। निरगुणिया गायनशैली का मुख्य आधार-वाद्य इकतारा और खड़ताल रहे हैं। यहाँ निर्गुणिया भजन-गायक प्रायः इकतारे के साथ झाँझ मृदंग लगाकर ही गाते हैं। इस गायन को नारदीय भजन भी कहा जाता है।

5. **मसाण्या अथवा कायाखोज के गीत :** निमाड़ में मृत्युगीतों को मसाण्या अथवा कायाखोज के गीत कहते हैं। किसी व्यक्ति की मृत्यु होने पर आत्मा की अमरता और शरीर की नश्वरता-संबंधी गीत गाए जाते हैं। मसाण्या गीतों को भी झाँझ, मृदंग और इकतारे के साथ समूह में गाया जाता है। मसाण्या गीत पुरुष-परक हैं। इन गीतों में आत्मा को दुल्हन की उपमा दी गई है और शरीर को दूल्हा कहा गया है।
6. **फाग गायन :** होली के अवसर पर फाग गीत गाए जाते हैं, जो प्राय: कृष्ण और राधा पर केन्द्रित होते हैं। दो या तीन ढफ बजाते हुए ऊँचे स्वर में सामूहिक रूप से पुरुषवर्ग फागगायन करता है, जिससे हँसी-मजाक, ठिठौली, छेड़छाड़ के गीत प्रमुख होते हैं। स्त्रीपरक फागगायन अलग होता है।
7. **गरबा/ गरबी/ गवलन गायनशैली :**

   गरबा गीत : निमाड़ में गरबा स्त्रीपरक आनुष्ठानिक लोक-गायन है। नवरात्रि में गरबे की स्थापना के साथ महिलाएँ ताली की थाप पर गरबा गीत गाती हैं और नृत्य भी करती हैं।

   गरबी गीत : गरबी प्राय: पुरुषपरक लोकगायन है। इसे झाँझ मृदंग के साथ गाया-बजाया जाता है। गरबी गीत निमाड़ी लोकनाट्य गायन का एक मुख्य अंग है। गरबी भक्ति, श्रृंगार और हास्यपरक होती है।

   गवलन : गवलन मूलत: कृष्णलीला गीत है। इसके गायन की पद्धति गरबी से भिन्न होती है। गवलन गीतों का मुख्य उपयोग रासलीला में किया जाता है। गवलन गीत पुरुषपरक हैं, जो झाँझ, मृदंग और ढोलक पर गाए जाते हैं।
8. **नाथपंथी गायन :** निमाड़ में नाथ जोगियों में सर्वथा अलग प्रकार के लोकगायन की पद्धति है। नाथ-जोगी भगवा वस्त्र पहने हाथ में रेकड़ी अथवा रूँ-रूँ बाजा बजाते गाते गाँव-शहर में दिखाई देते हैं। नाथ-जोगी प्राय: गोरख, कबीर अथवा भरथरी गाथा गाते हुए मिल जाते हैं। निमाड़ की नाथ-जोगी महिलाएँ प्राय: सुबह-सुबह परभाती गाती हुई मिलती हैं और घर-घर से नेग लेती हैं।

(ख) मालवा अंचल

1. **मालवी लोकगीत :** पुंसवन, जन्म, मुंडन, जनेऊ, सगाई-विवाह के अवसर पर पारम्परिक लोकगीत तथा पर्व-त्योहार, ऋतु, अनुष्ठान संबंधी गीतों के गाने की परंपरा समूचे मालवांचल में मिलती है। मालवी लोक-गायन में बोली की मिठास के साथ वहाँ की प्रकृति और संस्कृति की समृद्धि और सौन्दर्य के मूल स्वर सहज रूप से सुनाई देते हैं।
2. **भरथरी गायन :** मालवा में नाथ सम्प्रदाय के लोग चिंकारा पर भरथरी कथा गायन करते हैं। चिंकारा, नारियल की नट्टी, बाँस और घोड़े के बालों से निर्मित पारम्परिक वाद्य है। चिंकारा बालों से बने धनुष से बजाया जाता है जिसमें से रूँ-रूँ की मधुर ध्वनि निकलती है। भरथरी, गोपीचंद कथा, गोरखवाणी, कबीर, मीरा आदि के भजन गाते हुए नाथ-पंथी लोग भोर में मालवा के गाँवों में आज भी मिल सकते हैं। कुछ नाथ-पंथी अखाड़ों में सितार-तबले की संगत में बैठकर भरथरी गोपीचंद भजनादि गाने की परंपरा है।
3. **निरगुणी भजन गायन :** मालवा की निरगुणी लोकपद गायन-परंपरा बहुत पुरानी है। निरगुणिया भजनों में कबीर के अध्यात्म की छाप होती है। जिसमें नश्वर शरीर और अमर आत्मा तथा परमात्मा संबंधी तत्वों की

सरल प्रतीकों में विवेचना होती है। निरगुणिया भजनों में इकतारा और मंजीरे के स्वरों के साथ मालवा की लोकधुनों और मालवी बोली का माधुर्य देखा जा सकता है।

4. **संजा गीत :** संजा गीत मूलतः मालवा की पारम्परिक गायन-पद्धति है, इसमें किसी प्रकार का सह वाद्य नहीं होता। पितृपक्ष में किशोरियाँ संजा-पर्व मनाती हैं, गोबर और फूल पत्तियों से संजा की सुन्दर आकृतियाँ बनाती हैं, शाम को उनकी पूजा आरती करती हैं तथा संजागीत गाती हैं।
5. **हीड़ गायन :** श्रावण के महीने में मालवा में हीड़ गायन की प्रथा है। इधर बाग-बगीचों में झूले पड़ते हैं, उधर गाँवों में हीड़ गायन की प्रतिस्पर्द्धा शुरू होती हैं। हीड़ गायन मूलतः अहीरों के अवदानपरक लोक आख्यान है, जिसमें कृषि-संस्कृति की आन्तरिक परतों का सूक्ष्म वर्णन मिलता है।
6. **पर्व-त्योहार संबंधी गायन :** होली पर फाग, दिवाली पर देवारी, जन्माष्टमी पर कृष्णलीला गीत, नवरात्रि में देवी गीत गाने की परंपरा समूचे मालवा में है।
7. **बरसाती बारता :** बरसाती बारता ऋतु-कथा-गीत है। बरसाती बारता का कथन और गायन बरसात के समय में किया जाता है, इसलिए इसका नाम बरसाती बारता पड़ा। मालवा के गाँवों में घरों में बैठकर बरसाती बारता कही और गाई जाती है।

(ग) बुन्देलखण्ड

1. **बुन्देली लोकगीत :** शौर्य और शृंगार की धरती बुन्देलखण्ड की कला-संस्कृति सबसे अलग है। यहाँ के लोक-गीतों में शौर्य और शृंगार के भाव गुम्फित होते हैं। लोकगीतों के विषय पारिवारिक पृष्ठभूमि लिए हुए होते हैं, जिनमें लोकजीवन की सामाजिकता का सम्पुट होता है। लोकगीतों में लोकधुनों की माधुरी का वैविध्य बुन्देली लोकगीतों की खास पहचान है। जितने भी तरह के लोक-राग देश में प्रचलित हैं, वे सब बुन्देली लोकगीतों में प्रयुक्त हुए हैं।
2. **आल्हा गायन :** आल्हा-गान वीररस-प्रधान काव्य है। आल्हा की रचना लोककवि जगनिक ने लगभग एक हजार वर्ष पहले की थी। आल्हाखण्ड की मूल-भाषा बुन्देली थी, इस कारण जगनिक द्वारा लिखी आल्हा-उदल की बावन लड़ाइयाँ लोककण्ठों में सहज रूप से स्थान पा सकी हैं। आल्हाखण्ड संसार की सबसे लंबी गाथाओं में से एक है।
3. **भोलागीत अथवा बम्बुलिया :** बम्बुलिया बुन्देलखण्ड की धार्मिक परंपरा के मधुर गीत हैं, जिन्हें लमटेरा गीत भी कहा जाता है। बम्बुलिया गीत प्रायः स्त्री-पुरुष समूह द्वारा बिना वाद्य के श्रावण मास में शिवरात्रि, वसन्तपंचमी, मकर संक्रान्ति के अवसर पर गाया जाता है। बम्बुलिया गीतों की राग लंबी होती है। गीत प्रश्नोत्तर-शैली में होते हैं, उनका दोहराव होता है। भीलागीत शिव और शक्ति से संबंधित होते हैं। नर्मदा-स्नान जाते समय महिलाएँ समूह में भोला गीत गाती हुई निकलती हैं।
4. **फाग गायन :** फाग-गायन होली के अवसर पर होता है। फागुन माह के लगते ही समूचे बुन्देलखण्ड में फाग-गायन शुरू हो जाता है, जो रंगपंचमी तक चलता है। स्त्री-पुरुष एक दूसरे पर रंग गुलाल लगाकर गीत गाकर नृत्य करते हुए फाग खेलते हैं। फाग में मृदंग, टिमकी, ढप और मँजीरा बजाया जाता है।

5. **बेरायटा गायन :** बेरायटा मूलतः कथा-गायन-शैली है, जिसमें मुख्यरूप से महाभारत कथाओं के साथ अनेक ऐतिहासिक चरित, लोकनायकों की कथाएँ गाई जाती हैं। बेरायटा गायन केन्द्रीय रूप से एक व्यक्ति गाता है और सहयोगी गायक मुखिया का साथ देते हैं और कथा को आगे बढ़ाने के लिए हुंकारा देते हैं, बीच-बीच में कुछ संवाद भी बोलते हैं।
6. **देवारी गायन :** देवारी-गायन दोहों पर केन्द्रित होता है। अहीर, बरेदी, धोसी आदि जातियों में देवारी गायन और नृत्य करने की परंपरा है। दीपावली के अवसर पर ग्वाल-बाल सिर पर मोरपंख धारण कर घर-घर देवारी माँगते हैं, नेग पाते हैं और ऊँचे स्वर में दोहा गाकर ढोलक, नगड़िया, बाँसुरी की समवेत धुन पर नृत्य करते हैं। देवारी के दोहों के विषय कृष्ण-राधा प्रेम-प्रसंग, भक्ति तथा वीर-रस से पूर्ण होते हैं।
7. **जगदेव का पुवारा :** पुवारा मूलतः भजन-शैली में है। देवी की स्तुति से संबंधित एक लंबा आख्यान, जिसे भक्तें कहते हैं, चैत्र और क्वाँर मास में गाते हैं। इस अवसर पर जवारा गीत भी गाए जाते हैं। देवीगीतों को लद के नाम से भी जाना जाता है।

(घ) बघेलखण्ड

1. **बघेली लोकगीत :** बघेली लोकगीत की गायन-शैली मध्यप्रदेश के अन्य अंचलों से थोड़ी भिन्न है, क्योंकि बघेली बोली अवधी से प्रभावित है। बघेली लोकगीतों में लोक की व्यापकता, सरलता, भाव प्रवणता और सुबोधता सहजरूप से देखी जा सकती है।
2. **बसदेवा गायन :** बसदेवा बघेलखण्ड की एक पारम्परिक गायक-जाति है, जिन्हें हरबोले कहा जाता है। श्रवणकुमार की कथा गायन करने के कारण इन्हें सरमन गायक भी कहा जाता है। बसदेवा परम्परा से कई तरह की कथा और गाथाएँ गाते हैं। बसदेवा सिर पर कृष्ण की मूर्ति और पीला वस्त्र धारण कर हाथ में चुटकी पैजन और सारंगी लिये गाते हैं। वसदेवा जाति रामायण कथा, कर्ण कथा, मोरध्वज, गोपीचंद, भरथरी, भोले बाबा आदि लोक नायकों की चरित्र कथा गाते हैं।
3. **बिरहा गायन :** बघेलखण्ड में बिरहा गायन-परंपरा सभी जातियों में पाई जाती है। बिरहा की गायनशैली सर्वथा मौलिक और माधुर्यपूर्ण है। बिरहा प्रायः खेत, सुनसान राहों में सवाल जवाब के रूप में गाया जाता है। कहीं-कहीं बिरहा बिना वाद्यों और सवाद्य गाए जाते हैं। कानों में ऊँगली लगाकर ऊँची टेर के साथ बिरहा गाया जाता है। बिरहा शृंगारपरक विरह-गीत है।
4. **बिदेसिया गायन :** बिदेसिया गायन समूचे बघेलखण्ड में मिलता है। गड़रिया, तेली, कोटवार जाति के लोग बिदेसिया गायन में दक्षता रखते हैं। बिदेसिया की राग लंबी और गंभीर होती है। बिदेसिया का गायन प्रायः जंगल अथवा सुनसान जगह में किया जाता है।
5. **फाग गायन :** बघेलखण्ड में फाग गायन की परंपरा सबसे भिन्न और मौलिक है। यहाँ नगाड़ों पर फाग गायन किया जाता है। फाग गायनों में पुरुषों की मुख्य भागीदारी होती है। सामूहिक स्वरों में फाग गीतों की पंक्तियों का गायन नगाड़ों की विलंबित ताल पर शुरू होता है और धीरे-धीरे तीव्रता की ओर बढ़ता है।

मध्यप्रदेश के लोकनृत्य

1. निमाड़ के लोकनृत्य

- **गणगौर लोकनृत्य :** गणगौर नृत्य निमाड़ अंचल का पारम्परिक नृत्य है। यह चैत्र माह में पड़ने वाले गणगौर पर्व में किया जाता है। गणगौर गीतों के साथ नृत्य-परंपरा भी जुड़ी है। गणगौर में दो तरह के नृत्य होते हैं। एक झालरिया, दूसरा झेला। झालरिया नृत्य में स्त्रियाँ अलग समूह में और पुरुष अलग समूह में हिस्सा लेते हैं। गणगौर नृत्य के मुख्य वाद्य ढोल और थाली हैं।

गणगौर नृत्य : निमाड़

- **काठी नृत्य :** काठी, निमाड़ अंचल का पारम्परिक लोक नृत्य-नाट्य है। पार्वती की तपस्या से संबंधित मातृ पूजा का नृत्य है। ढाँक काठी इस का मुख्य वाद्य है। काठी नर्तकों की वेशभूषा अधिक कल्पनाशील होती है। जिसे 'बाना' कहा जाता है। हरिश्चन्द्र, सुरियालो, महाजन, गोंडेन नगर, भिलणों बाल आदि लंबी कथाएँ काठी नृत्य के साथ गाई जाती हैं। काठी का प्रारंभ देव-प्रबोधिनी एकादशी से और विश्राम महाशिवरात्रि को होता है।

काठी नृत्य : निमाड़

- **फेफारिया नाच :** फेफारिया पारम्परिक समूह–नाच है। स्त्री और पुरुष जोड़ी बनाकर गोल घेरे में नाचते हैं। फेफारिया वाद्य के कारण इस नाच का नाम फेफारिया नाच पड़ा। फेफारिया एक प्रकार की पुंगी है, जिसकी आवाज शहनाई से मिलती–जुलती है। फेफारिया की स्वरलहरी के साथ ढाँक और थाली की अनुगूँज पर स्त्री और पुरुष नर्तक हाथ–पैरों और कमर की विभिन्न मुद्राओं के साथ नृत्य को क्रमश: गति देते चलते हैं। फेफारिया नाच विवाह के अवसर पर किया जाता है।
- **मांडल्या नाच :** मांडल्या नाच ढोल पर किया जाता है। मांडल्या एक पारम्परिक समूह–नृत्य है। इसमें एक पुरुष ढोल बजाता है। संगत में काँसे की थाली का तीव्र स्वर नृत्य को अधिक उत्तेजक बनाता है। मांडल्या नाच केवल महिलापरक है। महिलाएँ ढोल की थाप पर जल्दी–जल्दी गति बदलती हैं, हाथ और पैरों की विभिन्न मुद्राओं को प्रदर्शित करती हैं।
- **आड़ा–खड़ा नाच :** निमाड़ में जन्म, मुंडन संस्कार और विवाह के अवसर पर कई नृत्य किए जाते हैं। इन नृत्यों को आड़ा या खड़ा नाच कहा जाता है। महिलाएँ घूंघट डाले, झुक कर, हाथ और घुटनों को नृत्य, गतियों के अनुसार, लय के साथ ऊपर–नीचे और कमर तक ले जाती हैं। ढोल और थाली इस नृत्य के मुख्य वाद्‌य हैं।
- **डंडा नाच :** चैत्र–वैशाख की रातों में विशेषकर गणगौर पर्व पर निमाड़ के किसान डंडा नाच करते हैं। इसमें 20 से 25 तक पुरुष नर्तक होते हैं। नर्तकों के दोनों हाथों में एक–एक डंडा होता है, जो लगभग एक या सवा मीटर का होता है। डंडा लेकर नाचने के कारण इसका नाम डंडा नाच पड़ा। डंडा नाच के प्रमुख वाद्‌य ढोल और थाली हैं। नाच मंद गति से शुरू होकर तीव्रतम गति पर जाकर समाप्त होता है।

2. मालवा के लोक नृत्य

- **मटकी नृत्य :** मालवा में मटकी नृत्य का अपना पारम्परिक रंग है। विभिन्न अवसरों, विशेषकर सगाई–विवाह पर, मालवा के गाँवों की महिलाएँ मटकी नृत्य करती हैं। एक ढोल या ढोलक की एक खास लय जो मटकी के नाम से जानी जाती है, उसकी थाप पर महिलाएँ नृत्य करती हैं। मटकी ताल के कारण इस नृत्य का नाम मटकी नृत्य पड़ा।

मटकी नृत्य : मालवा

महिलाएँ परम्परागत वेशभूषा में चेहरे पर घूँघट डाले नृत्य करती हैं। नाचने वाली पहले गीत की कड़ी उठाती है, फिर आसपास की महिलाएँ समूह में इस कड़ी को दोहराती-तिहराती हैं। नृत्य में हाथ और पैरों का संचालन होता है। नृत्य के केन्द्र में ढोल होता है। मटकी ताल इस नृत्य की मुख्य ताल है। ढोल किमची और डंडों से बजाया जाता है।

- **आड़ा-खड़ा रजवाड़ी नाच :** आड़ा-खड़ा रजवाड़ी नृत्य की परंपरा किसी भी अवसर पर समूचे मालवा में देखी जा सकती है, परंतु विवाह में तो मण्डप के नीचे आड़ा-खड़ा और रजवाड़ी नृत्य अवश्य किया जाता है। ढोल की पारम्परिक कहेरवा-दादरा आदि चालों पर आड़ा-खड़ा रजवाड़ी नाच किया जाता है।

3. बुन्देलखण्ड के लोकनृत्य

- **राई :** राई बुन्देलखण्ड का एक लोकप्रिय नृत्य है। जन्म, सगाई-शादियों, उत्सवों के अवसर पर राई नृत्य का आयोजन प्रतिष्ठा प्रदान करता है। राई के केन्द्र में नर्तकी होती है, जिसे गति देने का कार्य मृदंग वादक करता है। राई नृत्य के विश्राम का स्थान स्वाँग ले लेते हैं, स्वाँग के माध्यम से हँसी-मजाक की सटीक प्रस्तुति गुदगुदाने का कार्य करती है। बेजोड़ लोक संगीत, तीव्र गति नृत्य और तात्कालिक कविता के तालमेल ने राई नृत्य को एक ऐसी सम्पूर्णता प्रदान कर दी है, जिसका सामान्यत: अन्य लोक नृत्यों में मिलना दुर्लभ ही है।

राई नृत्य : बुन्देलखण्ड

- **कानड़ा :** बुन्देलखण्ड में कानड़ा या कनड़याई मूल रूप से धीवर समाज के लोग करते हैं। इसमें पहले गजानन भगवान् की कथा गाई जाती है। साथ ही गायन से पूर्व गुरु वंदना भी की जाती है। मुख्यत: यह नृत्य जन्म, विवाह आदि पर किया जाता है। कानड़ा नृत्य में मुख्य वाद्य सारंगी, लोटा, ढोलक और तारें होते हैं। कभी-कभी ढोलक की जगह मृदंग का भी प्रयोग किया जाता है। कानड़ा की एक खास वेशभूषा होती है।

- **सैरा नृत्य :** बुन्देलखण्ड में श्रावण-भादों में सैरा नृत्य किया जाता है। यह पुरुष-प्रधान है। इस नृत्य में 14 से 20 व्यक्ति भाग लेते हैं। उनके हाथों में लगभग सवा हाथ का एक-एक डंडा रहता है। नर्तक वृत्ताकार में खड़े होकर कृष्ण लीलाओं से संबंधित गीत गाते हुए नृत्य करते हैं। नर्तक की वेशभूषा साधारण होती है। साफा, कुर्ता, बंडी, धोती, हाथ में रूमाल तथा कमर में कमर-पट्टा और पैरों में घूँघरू होते हैं। इस नृत्य में ढोलक, टिमकी, मँजीरा, मृदंग और बाँसुरी वाद्य प्रमुख होते हैं।

सैरा नृत्य : बुन्देलखण्ड

- **बधाई :** बुन्देलखण्ड के ग्रामीण अंचलों में सगाई-विवाह के अवसर पर बधाई नृत्य करने की परंपरा है। इस नृत्य में स्त्री-पुरुषों की संयुक्त भूमिका होती है। पहले नर्तक-समूह वृत्ताकार में खड़े होकर नृत्य करते हैं। फिर एक-एक करके वृत के भीतर जाकर विभिन्न मुद्राओं में नृत्य किया जाता है। इस नृत्य में दो नर्तक और नर्तकी एक-साथ नाचते हैं। बधाई नृत्य में बधाई ताल बजाई जाती है। बधाई ताल मूलतः ढपले और मिरधिंग पर बजाई जाती है।
- **ढिमरियाई :** बुन्देलखण्ड में सामान्यतः ढीमर जाति के लोग इस नृत्य को करते हैं, इसलिए इसे ढिमरियाई नृत्य कहते हैं। सगाई-ब्याह एवं नव दुर्गा आदि अवसरों पर यह नृत्य किया जाता है। नृत्य करते समय प्रमुख नर्तक श्रृंगार और भक्ति के गीत गाता है। मुख्य नर्तक 'कत्थक' की तरह पदचालन करते हुए गीतों को हाव-भाव द्वारा समझाने की चेष्टा करता है। इस नृत्य की विशेषता पदचालन की है। दौड़ना, पंजों के बल चलना, मृदंग की थाप पर कलात्मक ढंग से ठुमकना, पदाघात करना आदि। समय पर द्रुत गति से घूमते हुए सात-आठ चक्कर लगाना, इसके प्रमुख भाव हैं। इस नृत्य में रेकड़ी, खंजड़ी, मृदंग, ढोलक, टिमकी आदि वाद्य बजाए जाते हैं।
- **नौरता :** नौरता नवरात्रि में किया जाने वाला कन्याओं का नृत्य है। यह नृत्य शक्ति-पूजा का नृत्य है।

4. बघेलखण्ड के लोकनृत्य

- **बिरहा अथवा अहिराई नृत्य :** बघेलखण्ड में बिरहा गायन के साथ नृत्य वृत्ति भी है। बिरहा नृत्य का कोई समय निश्चित नहीं होता। मन चाहे जब मौज में बिरहा किया जा सकता है। विशेषकर सगाई-शादियों और दीपावली में बिरहा नृत्य अवश्य होता है। जब बिरहा नृत्य अहीर लोग करते हैं तब वह अहिराई कहलाता है। इसी प्रकार जिस जाति में यह नृत्य किया जाता है उसी जाति के नाम से यह जाना जाता है। बिरहा में पुरुष नाचते हैं और कभी-कभी स्त्रियाँ भी उसमें शामिल होती हैं। जब स्त्री-पुरुष नाचते हैं तब सवाल जवाब होते हैं। बिरहा की दो पंक्तियाँ दोहे की तरह बघेली शैली में लंबी तान लेकर प्रमुख नर्तक गाता है और दोहे के अंत में नृत्य तीव्र गति से चलता है। सवाल जवाब की अंतिम पंक्ति के छोर पर वाद्य नगड़िया, ढोलक, शहनाई घनघना कर बज उठते हैं। इधर स्त्री और पुरुष नर्तक गति के साथ नृत्य करते हैं। हाथ और पैरों की मुद्राएँ दर्शनीय होती हैं। ताल की समाप्ति पर फिर यही क्रम शुरू होता है।

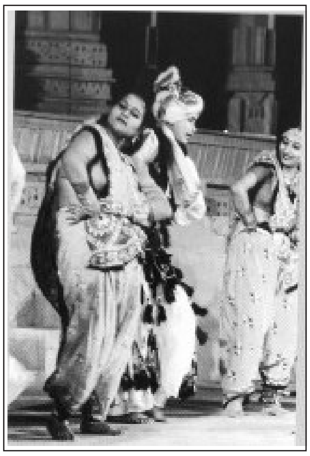

अहिराई नृत्य : बघेलखण्ड

- **राई नृत्य :** बुन्देलखण्ड की तरह बघेलखण्ड में भी राई नृत्य का प्रचलन है। दोनों की राई में बेहद फर्क है। बुन्देलखण्ड में नर्तकी और मृदंग राई की जान होती है। बघेलखण्ड में राई ढोलक और नगड़ियों पर गाई जाती है, लेकिन पुरुष ही स्त्रीवेश धारण कर नाचते हैं।
- **केहरा नृत्य :** केहरा, स्त्री और पुरुष दोनों, अलग-अलग शैली में नाचते हैं। इसकी मुख्य ताल केहरवा ताल है और इसके साथ बाँसुरी की जब मधुर धुन छिड़ जाती है तब पुरुष नर्तकों के हाथ और पैरों की नृत्य-गति असाधारण हो उठती है। महिलाओं के हाथों और पैरों की मुद्राओं का संचालन और गतिमय हो जाता है। नृत्य के पहले पुरुष केहरा गाते हैं। नृत्य के सम पर पहुँचने पर मुख्य नर्तक कोई दोहा कहता है और दोहे की अंतिम कड़ी के साथ हाथों के झटकों के साथ पूरी गति से नृत्य प्रारंभ होता है।
- **दादर नृत्य :** दादर बघेलखंड का प्रसिद्ध नृत्य है। दादर गीत अधिकांशत: पुरुषों के द्वारा खुशी के अवसर पर गाए जाते हैं और कहीं कहीं पुरुष नारी वेश में नाचते हैं, दादर के लिए कोल, कोटवार, कहार, विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं। दादर के मुख्य वाद्य नगड़िया, ढोल, ढोलक, ढप और शहनाई है। महिलाएँ नृत्य करती हैं और पुरुष वाद्य बजाते हुए गाते हैं। महिलाएँ प्राय: घूँघट में नृत्य करती हैं, पैरों में घूँघरू बाँधती हैं। हाथ, पैरों और कमर की मुद्राओं से दादर नृत्य-परंपरा का निर्वाह करती है।
- **कलसा नृत्य :** बारात की अगवानी में सिर पर कलश रखकर नृत्य करने की परंपरा बघेलखण्ड में प्रचलित है। द्वार पर स्वागत की रस्म होने के पश्चात् नृत्य शुरू होता है। नगड़िया, ढोल, शहनाई की समवेत धुन पर कलसा नृत्य चलता है।
- **केमाली नृत्य :** केमाली नृत्य को साजन-सजनई नृत्य भी कहते हैं। केमाली में स्त्री-पुरुष दोनों हिस्सा लेते हैं। केमाली विवाह के अवसर पर किया जाता है। केमाली के गीत सवाल जवाब की शैली में होते हैं। साजन-सजनई गीत बड़े कर्णप्रिय और भावप्रिय होते हैं।

प्रदेश के लोकनाट्य

1. निमाड़ी लोकनाट्य

- **गम्मत :** गम्मत निमाड़ का पारंपरिक लोकनाट्य है। निमाड़ में यह अत्यधिक प्रसिद्ध है। यह लोकजनों के मनोरंजन का साधन है। गम्मत, मुख्यत: तीन अवसरों—नवरात्रि, होली एवं गणगौर पर्व पर की जाती है।

2. मालवा का लोकनाट्य

- **माच :** भारतीय लोकनाट्य-शैलियों में माच एक लोकप्रिय लोक-नाट्य परंपरा है। मालवा में लोक-मंच के रूप में माच लगभग दो-सौ वर्षों से लोकानुरंजन का सबल माध्यम बना हुआ है। माच मालवी-लोक का बेजोड़ रंगकर्म है। 'माच' संस्कृत के मंच से बना है। कुछ लोगों का कहना है कि माच राजस्थान के ख्याल, कलगीतुर्रा की मालवी संतान है, लेकिन इतना निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि माच के विकसित रूप ने मौलिक आत्मीयता उज्जैन की लोक बस्तियों में प्राप्त की। उज्जैन माच की उत्सभूमि है।

  माच के प्रवर्तक, गुरु या उस्ताद कहलाते हैं। उस्तादों के अपने-अपने अखाड़े होते हैं। माच को प्रतिष्ठा दिलाने वाले गुरुओं में सर्वश्री गोपाल जी, बालमुकुन्द जी, राधाकिशन जी, कालूराम जी और भेरूलाल जी का बुनियादी और उल्लेखनीय योगदान है। राधाकिशन जी अखाड़े के श्री सिद्धेश्वर सेन तथा कालूराम जी के पोते श्री ओमप्रकाश शर्मा माच को वर्तमान स्वरूप प्रदान करने तथा आधुनिक रंगमंच पर माच को जोड़ने में परंपरागत व मौलिक स्थान रखते हैं।

3. बुन्देली लोकनाट्य

- **स्वाँग :** स्वाँग बुन्देलखंड का पारंपरिक लोकनाट्य है। इसे राई नृत्य के बीच में हास्य और व्यंग्य के लिए किया जाता है। स्वाँग की अवधि अधिक-से-अधिक दस-पन्द्रह मिनिट होती है। इसमें नकल उतारी जाती है। स्वाँग में अधिक-से-अधिक तीन या चार पात्र होते हैं। पुरुष ही स्त्री का अभिनय करते हैं। इसमें एक विदूषक-पात्र भी होता है। धतूरा खान, ब्याव को स्वाँग, भूरी भैंस, पंडित ठाकुर आदि प्रसिद्ध स्वाँग है।

4. बघेली लोकनाट्य

- **छाहुर :**छाहुर मूलत: बघेलखण्ड में कृषक जातियों का लोकनाट्य है। दीपावली से गोप-अष्टमी तक छाहुर नाट्य गायन का आयोजन करते हैं। चार छह लोग मिलकर छाहुर नाट्य करने में सक्षम होते हैं। इसमें किसी मंच की भी जरूरत नहीं होती। गाँव के चौराहे अथवा चौपाल पर या घर के आँगन में छाहुर नाट्य किया जा सकता है। छाहुर में पुरुष ही स्त्री की भूमिका निभाते हैं। पुरुष स्त्री का शृंगार बघेली परंपरा के अनुसार करते हैं। अन्य पात्र विषय और प्रसंग के अनुसार निश्चित होते हैं। इसका संगीत पारंपरिक है। गीत के साथ कथा का विस्तार छाहुर में होता है। छाहुर बघेलखण्ड का प्रतिनिधि लोक-नाट्य है।
- **मनसुखा :** मनसुखा एक लोक-प्रहसन है। यह रास का बघेली रूपांतर है। इसमें दो मंच और दो पदों का प्रयोग होता है। साथ में मेकअप का स्थान भी होता है। मनसुख उर्फ विदूषक महोदय और गोपियों में नोंकझोंक व छेड़छाड़ भी चलती है। मसखरों को गाँवों में मनसुखलाल भी कहते हैं।

- **हिंगाला :** हिंगाला एक मंच-रहित सीधा और सरल नाट्यरूप है। दो दलों में गीतों की (नोंकझोंक) मचती है। माँदर टिमकी इसके मुख्य वाद्य हैं।
- **जिंदबा :** जिंदबा विवाह के अवसर पर होता है। यह मूलत: महिला-नाट्य है।
- **लकड़बग्घा :** लकड़बग्घा आदिवासी युवक-युवतियों का लोकनाट्य है, जो खुले मंच पर अभिनीत होता है। यह विवाह के बाद खेला जाता है। लड़की को लकड़बग्घा उठा ले जाता है, लड़की करुण क्रन्दन करती है। इस वन्य नाट्य में पशु और मनुष्य के हार्दिक योग का अभिनय मार्मिकता से किया जाता है।
- **रास :** राधा, कृष्ण और गोपियों के नाना प्रसंगों को लेकर कृष्णलीला बघेलखण्ड के गाँवों में की जाती है। रास कृष्णलीला का ही अंग है। बघेली में इसका अभिनय पारसी कम्पनियों के प्रभाव से आक्रांत दिखता है। कालीदह प्रसंग, गेंदलीला, वैद्यलीला या नर्तकी प्रसंग यहाँ देखने को मिलते हैं।
- **नौटंकी :** नौटंकी का बघेली संस्करण उत्तरप्रदेश में प्रचलित नौटंकी से मिलता-जुलता है। इंदल और बैरग राजा की कथा अथवा मनिहारिन के प्रसंग को लेकर नौटंकियाँ चलती हैं। नौटंकी में कई पदों का प्रयोग किया जाता है। बघेली नौटंकियों में दाम्पत्य-जीवन के हास्य-उत्पादक अंश को भी जोड़ा जाता है।
- **रामलीला :** बघेलखण्ड में रामलीला की अनेक पारम्परिक मंडलियाँ हैं। रामलीला में राम की कथा का उनकी लीला के अनुसार मंचन होता है।

प्रदेश की लोकचित्र परंपरा

1. निमाड़ की लोक-चित्रकला

निमाड़ अंचल में लोक-चित्रकला की परंपरा सदियों से चली आ रही है। पूरे वर्ष भर पर्व-तिथि त्योहारों से संबंधित भित्तिचित्रों का रेखांकन चलता ही रहता है। हरियाली अमावस्या को जिरोती, नागपंचमी को नाग भित्ति-चित्र, कुंवार मास में सांजाफूली, नवरात्रि में नरवत, दशहरे के दिन दशहरे का भूमि-चित्रण, सेली सप्तमी पर हाथा (थापा) दिवाली, पड़वा पर गोवर्धन, दिवाली दूज पर भाईदूज का भित्तिचित्र, पर विवाह में कुलदेवी का भित्तिचित्र, दरवाजों पर सातीपाना, मुख्य द्वार पर गणपतिपाना, दूल्हा दुल्हन के हाथों में मेंहदी मांडना, पहले शिशु-जन्म पर पगल्या का शुभ संदेश रेखांकन, साँतिया, चौक, कलश, मांडना आदि मेलों-बाजारों में विभिन्न गुदना-आकृतियों का रेखांकन निमाड़ की लोकचित्र परंपरा है। निमाड़ में भूमि अलंकरण के रूप में 'मांडना' सर्वथा एक स्वतंत्र और पूर्ण कला के रूप में प्रचलित है।

2. मालवा की लोक-चित्रकला

मालवा में दो तरह की लोकचित्र परंपरा है। एक वह परंपरा जो पर्व-त्योहारों पर घर की महिलाएँ व्रत-अनुष्ठान के साथ दीवारों पर गेरू, खड़िया, चावल के आटे को घोलकर बनाती हैं। दूसरी व्यावसायिक रूप से

विकसित लोक–चित्रकला। व्यावसायिक चित्रकला का आधार सामाजिक सौन्दर्य–बोध है, जो घर की बाहरी भित्तियों अथवा मंदिर के अहातों में बनाई जाती है। पर्व त्योहारों पर भित्तिचित्र एवं भूमि–अलंकरण किया जाता है। पारम्परिक चित्रकला में हरियाली अमावस्या पर दिवासा, नागपंचमी को नाग चित्र, श्रावणी पर सरवण चित्र, जन्माष्टमी पर कृष्ण जन्म के भित्री चित्र, श्राद्ध पक्ष में संजा, नवरात्रि में नरवत आदि भित्ति कला के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। इसमें संजा, मालवा की किशोरियों का पर्व है, जो पूरे श्राद्ध पक्ष में मनाया जाता है, इसमें किशोरियाँ प्रतिदिन गोबर, फूलपत्ती अथवा चमकीली पन्नियों से सोलहों दिनों संजा की अलग–अलग आकृतियाँ बनाती हैं। अंतिम दिन सुन्दर किल्ला कोट बनाया जाता है। लड़कियाँ प्रतिदिन सांझ में संजा की आरती उतारकर समूह में गीत गाती हैं। भूमि–अलंकरण में मालवा में मांहणा मांडने की प्रथा बहुत पुरानी है। विशेषकर दिवाली पर तो घर आँगन में मांडनों की बहार देखी जा सकती है।

3. बुन्देली लोक–चित्रकला

पर्व–त्योहारों पर बुन्देली महिलाएँ उनसे संबंधित चित्र–रेखांकन बनाकर उनकी पूजा–कथा कहती हैं। वर्ष भर कोई–न–कोई चौक–चित्र बनाने की परिपाटी समूचे बुन्देलखण्ड में मिलती है।

- **सुरौती** – बुन्देलखण्ड का पारम्परिक भित्ति चित्रण है। दीपावली के अवसर पर लक्ष्मी पूजा के समय सुरैती का रेखांकन महिलाओं द्वारा किया जाता है। इस चित्र में देवी लक्ष्मी की आकृति उकेरी जाती है, वहीं भगवान विष्णु का आलेखन किया जाता है। सुरैती का रेखांकन गेरू से किया जाता है।

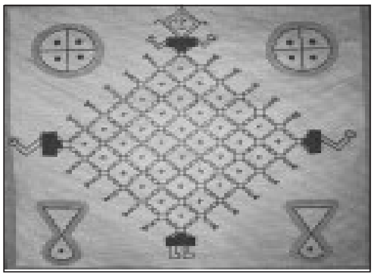

सुरौती लोकांकन (बुन्देली शैली)

- **नौरता**– नवरात्रि में कुंवारी कन्याओं द्वारा बनाया जाने वाला भित्ति–चित्र है,जो मिट्टी, गेरू, हल्दी, छुई आदि से बनाया जाता है। लड़कियाँ सुआटा संबंधी गीत गाती हैं।
- **मोरते**– मोरते विवाह के अवसर पर बनाए जाने वाले भित्ति–रेखांकन है। यह दरवाजे के दोनों तरफ की दीवार पर बनाए जाते हैं। पुतरी की आकृति 'मुख' होती है। इसी जगह दूल्हा–दुल्हन हल्दी के थापे लगाते हैं।
- **गोधन गोवर्धन** – गोवर्धन गोबर से बनाए जाते हैं। दिवाली पड़वा पर इनकी पूजा की जाती है। भाई दूज के दिन गोबर से दोज–पुतलियाँ बनाई जाती हैं।
- **चौक** – बुन्देलखण्ड में चौक बनाने की प्रथा सबसे अधिक है। जीवन में ऐसा कोई भी अवसर नहीं होता होगा, जब चौक न पूरे जाते हों। चौक चावल, गेहूँ–ज्वार के आटे, हल्दी, कुमकुम से बनाए जाते हैं। छुई, खड़िया और गेरू से भी कहीं–कहीं चौक बनाए जाते हैं। जन्म, जनेऊ, मुंडन, विवाह आदि सोलह संस्कारों में चौक बनाने की परंपरा है, यहाँ तक कि मृत्यु के अवसर पर भी चौक बनाने की प्रथा है।

4. बघेल लोक–चित्रकला

बघेलखण्ड में भित्तिचित्र, भूमि–अलंकरण और भित्ति–उद्रेखण करने की परंपरा है। भित्ति अलंकरण किसी–न–किसी अनुष्ठान, त्योहार और व्रतकथा से जुड़े हैं। भित्तिउद्रेखण तथा अलंकरण सौन्दर्य–बोध से जुड़े हैं।

कोहबर, हरछठ, करवाचौथ, नागपंचमी, नेउरा नमे, छठी, दिवाली, चित्र आदि बघेलखण्ड के परंपरागत चित्र हैं। बघेलखण्ड के गाँवों में दीवारों पर मिट्‌टी और गोबर से कलात्मक रूपांकन बनाए जाते हैं। ऐसे अभिप्रायों में चिड़ियाँ, मोर, चाँद, सूरज, हाथी, फूल-पौधे, तुलसी क्यारी, शेर तथा देवी-देवताओं की आदमकद आकृतियाँ प्रमुख होती हैं। पारंपरिक चित्रों का रूपांकन, प्राय: महिलाएँ ही करती हैं।

- **कोहबर-** कोहबर एक वैवाहिक भित्तिचित्र है। कोहबर के मूलरंग गेरू और चावल का श्वेत घोल है। सिन्दूर और हल्दी से पीला रंग पत्थर पर घिसकर प्राप्त किया जाता है। कोहबर बनाते समय महिलाएँ गीत गाते हुए चित्र बनाती हैं। कोहबर बन जाने के बाद दूल्हा-दुल्हन पूजा करते हैं। कोहबर की आकृतियों को पुतरियाँ कहते हैं। कोहबर के आसपास पुरईन की आकृति अवश्य बनाई जाती है।
- **तिलंगा-** तिलंगा कोयले से बनाई जाने वाली आकृति है। कोयले में तिल्ली का तेल मिलाकर भित्ति पर तिलंगा की आकृति उकेरी जाती है।
- **छठी चित्र -** शिशु-जन्म के छठवें दिन पर छठी माता का रेखांकन किया जाता है। गेरू और चावल के आटे के घोल से बनाया जाता है तथा इसके चारों ओर गोबर की लकीर से इसे सजाया जाता है।
  नेऊरा नमे बघेलखंड का पारम्परिक भित्तिचित्र है। यह चित्र भादों महीने की नवमी के दिन सुहागन महिलाएँ व्रत करके पूजा के समय बनाती हैं।
- **मोरइला-** मोरइला का अर्थ मोर के चित्रों से है। इसे मोर-मुरैला भी कहते हैं। इसका संबंध भित्ति अलंकरण से है। दीवारों को छुही मिट्‌टी से पोतकर उस पर पतली गीली मिट्‌टी से मोरों की जोड़ी की आकृतियाँ बनाई जाती है, सूखने के बाद जिन्हें गेरू, नील, खड़िया आदि कई रंगों से रंगते हैं।
- **नाग भित्तिचित्र-** नागपंचमी के दिन बघेली महिलाएँ घर की भीतरी दीवार पर गेरू अथवा गोबर के घोल से दूध पीते हुए नाग नागिन के जोड़े का रेखांकन करती हैं, पूजा करती हैं। भूमिचित्रों में कोंडर और चौक प्रमुख हैं।

प्रदेश की रूपंकर कलाएँ

- **मिट्‌टी शिल्प**

  मनुष्य ने सबसे पहले मिट्‌टी के बरतन बनाए। मिट्‌टी से ही खिलौने और मूर्तियाँ बनाने की प्राचीन परंपरा है। मिट्‌टी का कार्य करने वाले कुम्हार होते हैं। मध्यप्रदेश के प्रत्येक अंचल में कुम्हार मिट्‌टी-शिल्प का काम करते हैं। लोक और आदिवासी दैनिक जीवन में उपयोग में आने वाली वस्तुओं के साथ कुम्हार परम्परागत कलात्मक रूपाकारों का निर्माण करते हैं। धार-झाबुआ, मंडला-बैतूल, रीवा-शहडोल आदि के मिट्‌टी-शिल्प अपनी-अपनी विशेषताओं के कारण महत्वपूर्ण हैं। प्रदेश के विभिन्न लोकांचलों की पारम्परिक मिट्‌टी शिल्पकला का वैभव पर्व-त्योहारों पर देखा जा सकता है।

- **काष्ठ शिल्प**

  काष्ठ शिल्प की परंपरा बहुत प्राचीन और समृद्ध है। जब से मानव ने मकान में रहना सीखा तब से काष्ठ कला की प्रतिष्ठा हुई, इसलिए काष्ठ से निर्मित मनुष्य के आस्था-केन्द्र मंदिर और उसके निवास स्थापत्य कला के चरम कहे जा सकते हैं। अलंकरण से लेकर मूर्ति-शिल्प तक की समृद्धि इन केन्द्रों में देखी जा सकती है।

आदिम समूहों में सभी काष्ठ में विभिन्न रूपाकार उकेरने की प्रवृत्ति सहज रूप से देखी जाती है। गाड़ी के पहियों, देवी–देवताओं की मूर्तियों, घरों के दरवाजों, पाटों, तिपाही पायों और मुखौटों आदि वस्तुओं में काष्ठ कला का उत्कर्ष प्राचीन समय से देखा जा सकता है।

- **खराद कला**

  मध्यप्रदेश में खराद पर लकड़ी को सुडौल रूप देने की कला अति प्राचीन है। जिसमें खिलौनों और सजावट की सामग्री तैयार करने की अनंत संभावनाएँ होती हैं। श्योपुरकलाँ, बुदनीघाट, रीवा, मुरैना की खराद कला ने प्रदेश ही नहीं, बल्कि प्रदेश के बाहर भी प्रसिद्धि पाई है। लकड़ी पर चढ़ाए जाने वाले रंगों का निर्माण इन कलाकारों द्वारा अपने ठेठ रूप में आज भी मौजूद है। खराद सागवान, दूधी, कदम्ब, सलई, गुरजैल, मेहला, खैर आदि की लकड़ी पर की जाती है। लाख चपड़ी, राजन बेरजा, सरेस, गोंद, जिंक पाउडर से रंग बनाए जाते हैं। केवड़े के पत्ते से रंगों में चमक पैदा की जाती है। श्योपुरकलाँ, रीवा और बुदनीघाट खराद कला के पारम्परिक केन्द्र हैं।

- **कंघी कला**

  सम्पूर्ण भारत के ग्रामीण समाज और आदिवासी समाज में खासतौर पर अनेक प्रकार की कंघियों का प्राचीनकाल से ही प्रचलन चला आ रहा है। आदिवासियों में कंघियाँ प्रेम का प्रतीक हैं। कंघी बनाने का श्रेय बंजारा जनजाति को है। मालवा में कंघी बनाने का कार्य उज्जैन, रतलाम, नीमच में होता है।

- **बाँस शिल्प**

  बाँस से बनी कलात्मक वस्तुएँ सौन्दर्यपरक और जीवनोपयोगी होती है। बैतूल, मंडला आदि लोकांचल में विभिन्न जातियों के लोग अपने दैनिक जीवन में उपयोग के लिए बाँस की बनी कलात्मक चीजों का स्वयं अपने हाथों से निर्माण करते हैं। बाँस का कार्य करने वाली कई जातियों में कई सिद्धहस्त कलाकार हैं।

- **धातु शिल्प**

  मध्यप्रदेश के विभिन्न अंचलों में धातु शिल्प की सुदीर्घ परम्परा है। प्रदेश के लगभग सभी आदिवासी और लोकांचलों के कलाकार पारम्परिक रूप से धातु की ढलाई का कार्य करते हैं। टीकमगढ़ के स्वर्णकार और बैतूल के भरेवा कलाकारों ने आज तक अपनी परम्परा को अक्षुण्य रखा है। टीकमगढ़ की धातु कला की तकनीक का इतिहास अत्यन्त प्राचीन और पारम्परिक है। आजकल विशेषकर मूर्तियों का काम टीकमगढ़ के क्षेत्र में होता है।

- **पत्ता शिल्प**

  पत्ता शिल्प के कलाकार मूलतः झाडू बनाने वाले होते हैं। छिन्द पेड़ के पत्तों से कलात्मक खिलौने, चटाई, आसन, दूल्हा–दुल्हन के मोढ़ आदि बनाए जाते हैं। पत्तों की कोमलता के अनुरूप कलात्मक वस्तुएँ बनाने में कलाकार परम्परा से लगे हैं।

- **कठपुतली**

  कथाओं और ऐतिहासिक घटनाओं को नाटकीय अंदाज में व्यक्त करने की मनोरंजक विधा कठपुतली है। जिसमें मानवीय विचारों और भावों को अभिव्यक्त करने वाले कठपुतली के प्रसिद्ध पात्र अनारकली, बीरबल,

बादशाह अकबर, पुंगीवाला, घुड़सवार, साँप और जोगी होते हैं। कठपुतली लकड़ी और कपड़े से निर्मित होती है। उसमें चमकीली गोटें लगाकर उसे सजाया जाता है। इसे नचाने का कार्य मुख्यत: नट जाति के लोग करते हैं। कठपुतली कला मध्यप्रदेश में राजस्थान और उत्तरप्रदेश से आई है।

- **गुड़िया शिल्प**

नयी पुरानी रंगीन चिन्दियों और कागजों से गुड़ियाएँ बनाने की परंपरा लोक में देखी जा सकती है। खिलौनों में गुड़िया बनाने की प्रथा बहुत पुरानी है, परंतु कुछ गुड़ियाएँ पर्व त्योहारों से जुड़कर मांगलिक अनुष्ठानपरक भी होती है, जिनका निर्माण और बिक्री उसी अवसर पर होता है। ग्वालियर अंचल में कपड़े, लकड़ी और कागज से बनाई जाने वाली गुड़ियों की परंपरा विवाह-अनुष्ठान से जुड़ी होती है। उनके नाम से व्रत पूजा की जाती है। ग्वालियर अंचल की गुड़ियाएँ प्रसिद्ध हैं।

- **छीपा शिल्प**

कपड़ों पर लकड़ी के छापों से छापे जाने वाले शिल्प को छीपा शिल्प कहते हैं। यह कार्य छीपा जाति के लोग करते हैं। उसमें वनस्पति रंगों का उपयोग किया जाता है। इसके मुख्य रंग लाल, गेरूवा, कत्थई, पीला, काला होते हैं। बाग, कुक्षी, मनावर, बदनावर, गोगांवा, खिराला और उज्जैन इसके मुख्य केन्द्र हैं।

- **पिथौरा भित्तिचित्र**

पिथौरा भित्तिचित्र झाबुआ का अनुष्ठानिक चित्रकर्म है। इसके लिखने वाले कलाकार लिखिन्दरा कहलाते हैं, जो परम्परागत श्रेष्ठ कलाकार होते हैं। लिखिन्दरा के परिवार में पीढ़ी-दर-पीढ़ी पिथौरा बनाने की कला चलती है। पिथौरा में घोड़ों का चित्रांकन मुख्य रूप से होता है।

- **महेश्वरी साड़ी**

महेश्वरी साड़ी अपनी बनावट, सजावट, रंग और कलात्मकता के लिए भारत ही नहीं बल्कि सारे विश्व में प्रसिद्ध है। महेश्वरी साड़ी की मुख्य विशेषता छोटी चौखाना-चौकड़ी और कलात्मक किनारी पल्लू है। जिसमें जरी रेशम से हथकरघा पर कढ़ाई की जाती है। महेश्वरी साड़ी उद्योग-कला में स्थापित करने का श्रेय देवी अहिल्याबाई को है।

- **चंदेरी साड़ी**

चंदेरी में बनने के कारण इस साड़ी का नाम 'चंदेरी साड़ी' पड़ा। चंदेरी साड़ी सूती और रेशमी दोनों तरह की बनाई जाती है। चंदेरी साड़ी की मुख्य विशेषता उसके हल्के और गहरे रंग, कलात्मक चौड़ी बार्डर, मोर बतख की आकृतियाँ उकेरना है। चंदेरी साड़ी की लोकप्रियता देश और देश से बाहर तक पहुँची है।

- **प्रस्तर शिल्प**

मंदसौर, रतलाम, जबलपुर, ग्वालियर, सागर आदि इस शिल्प के केन्द्र माने जाते हैं। पत्थर से मूर्ति गढ़ने वाले प्रदेश में कई शिल्पकार-जातियाँ हैं। ये शिल्पकार, गूजर, गायरी, जाट, सिलावट, लाट आदि होते हैं, जो

विभिन्न देवी-देवताओं, नंदी आदि की मूर्तियाँ गढ़ते हैं। इसके अलावा वे कुछ मूर्तियाँ तथा शिल्प ऐसे भी गढ़ते हैं, जिनका महत्व सौन्दर्यात्मक अथवा दैनिक उपयोग की वस्तुओं का है। भेड़ाघाट संगमरमर की मूर्तियाँ और ग्वालियर पौराणिक देवी-देवताओं की मूर्तियाँ बनाने का केन्द्र है।

- **लाख शिल्प**

वृक्ष के गोंद या रस से लाख बनाई जाती है। लाख को गरम करके उसमें विभिन्न रंगों को मिलाकर अलग-अलग रंगों के चूड़े बनाए जाते हैं। लाख का काम करने वाली एक जाति का नाम ही लखेरा है। लखेरा जाति के स्त्री-पुरुष दोनों पारम्परिक रूप से लाखकर्म में दक्ष होते हैं। लाख के चूड़े, कलात्मक खिलौने, शृंगार-पेटी, डिब्बियाँ, लाख के अलंकृत पशु-पक्षी आदि वस्तुएँ बनाई जाती हैं। उज्जैन, इंदौर, रतलाम, मंदसौर, महेश्वर लाख-शिल्प के परम्परागत केन्द्रों में से हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. प्रदेश के प्रमुख लोकगीतों के नाम लिखिए।
2. फाग कब गाया जाता है? लिखिए।
3. प्रदेश के प्रमुख लोकनृत्यों का वर्णन कीजिए।
4. बुन्देलखण्ड और बघेलखण्ड के राई नृत्य में क्या अंतर है?
5. गम्मत क्या है? गम्मत कब की जाती है? लिखिए।
6. बुन्देलखण्ड का प्रसिद्ध लोकनृत्य कौन-सा है?
7. मालवा की लोक-चित्रकला का वर्णन कीजिए।
8. बघेल लोक-चित्रकला का वर्णन कीजिए।
9. प्रदेश की रूपंकर कलाओं का वर्णन कीजिए।